# लोकगीतों का शास्त्रीय पक्ष

## 'लोक' शब्द की व्याख्या :-

'लोक' शब्द का अर्थ अत्यन्त व्यापक है। सामान्य अर्थ में 'लोक' शब्द का तात्पर्य जन सामान्य व सामान्य लोगों से संबंधित बातों से होता है। 'लोक' शब्द का एक अर्थ जिस समाज में हम रहते हैं, वह भी है। सम्पूर्ण जगत भी लोक कहलाता है।

प्रसिद्ध विद्वान डा० विद्या निवास मिश्र ने उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ द्वारा प्रकाशित उत्तर प्रदेश के लोक गीतों के संग्रह "चन्दन चौक" की भूमिका में 'लोक' की व्याख्या करते हुए कहा है- (पृ० ५-६)

"लोक शब्द के अर्थ जगत पर जब हम विचारते हैं तो यह मिलता है कि यह शब्द 'लोक' धातु अर्थात देखने के अर्थ में प्रयुक्त धातु से निष्पन्न है। लोक का वैदिक अर्थ प्रकाश, खुली जगह, दृश्य जगत है और उसके बाद उसका अर्थ मुक्त विचरण भी है। इसी कारण इसका विकसित अर्थ है - पूरा विश्व, जो तीन, सात या चौदह लोकों में विभक्त है। उत्तर वैदिक काल और महाभारत काल में लोक का अर्थ हुआ पृथ्वी लोक और उसके निवासी, या फिर इसका अर्थ सामान्य जीवन, सामान्य भाषा हुआ। लौकिक का अर्थ इन्द्रियगोचर

जीवन से सम्बद्ध हुआ।

लोक के योग से अर्थ निष्पन्न हुए, जिसमें लोकगीत, लोकगाथा, लोक चारित्र्य, लोकाचार, लोक तन्त्र, लोक धर्म, लोक-प्रसिद्धि, लोक मात्रिका, लोक मार्ग, लोक यात्रा, लोक रंजन, लोक वृन्द, लोक विरुद्ध, लोक वृत्त, लोक संग्रह, लोक स्थिति, लोक हित जैसे शब्द हैं। सभी शब्दों में लोक का अर्थ व्यापक मानव-व्यवहार है, अथवा मूल्य बोध से प्रेरित स्वीकृत व्यवहार है, या चेतना है। ताण्ड्य ब्राह्मण में लोक-विन्दु शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया गया है, जो लोगों को स्वतंत्रता दे, खुलापन दे, खुली जगह दे और खुलेपन के लिए एक आमन्त्रण है।

'लोक' शब्द के संबंध में विभिन्न विद्वानों के विचार निम्न हैं-

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल - 'लोक' हमारे जीवन का महा समुद्र है, जिसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सुरक्षित है।

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी - 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम से न लेकर नगरों, गांवों में फैली उस समूची जनता से लिया गया है, जो परिष्कृत रुचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा, अधिक

सरल और अकृत्रिम जीवन की अभ्यस्त होती है।

डा० कृष्णदेव उपाध्याय :- आधुनिक सभ्यता से दूर अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली तथाकथित अशिक्षित और असंस्कृत जनता को 'लोक' कहते हैं, जिनका आचार विचार एवं जीवन परम्परायुक्त नियमों से नियंत्रित होता है। उन्होंने आगे लिखा है कि जो लोग संस्कृति तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान हैं, लोक हैं।

डा० श्याम परमार :- लोक और वेद की भिन्नता ने वेद की प्रतिष्ठा के साथ लोक के स्वतन्त्र महत्त्व को क्रमशः समुद्भूत किया है, किन्तु आज लोक का प्रयुक्त प्रभाव वैदोत्तर संस्कृति के सीमित अर्थ से ऊपर उठ चुका है, उसकी भावना वैदिक, अवैदिक दोनों क्षेत्रों को स्वाभाविक रूप से स्पर्श करने लगी है।

(स्रोत - "लोकगीतों में वेदना और विद्रोह के स्वर", संपादक - माता प्रसाद, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली)

वेदाध्ययन से ज्ञात होता है कि 'लोक' शब्द का प्रयोग ऋग्वेद में दिव्य एवं पार्थिव के अर्थ में किया गया है। भरतमुनि के प्राचीन ग्रंथ "नाट्यशास्त्र" में "लोकधर्मप्रवृत्ति"

की चर्चा है। मतंग ने अपने संगीत विषयक ग्रन्थ "बृहद्देशी" में "लोकानां नरेन्द्राणां" का उल्लेख किया है। श्रीमद् भागवत गीता का "अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथित: पुरुषोत्तम:" भी लोक और वेद दोनों को स्वीकार करता है। श्री कृष्ण ने लोक-संग्रह पर विशेष बल दिया है, जिसका अर्थ सामान्य जनता का व्यवहार, आचरण एवं आदर्श है - "लोक संग्रहमेवापि संपश्यन् कर्तुमर्हसि"। सम्राट अशोक के शिलालेखों में भी "अनुक्तरं सर्व लोक हिताय" तथा "नास्तिहि कम्मतरं सर्व लोक हितप्पा" के प्रयोग द्वारा लोक का विशिष्ट अर्थ सूचित किया गया है।

इस प्रकार यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि 'लोक' शब्द का अभिप्राय सामान्य जन से संबंधित आयामों से है। अत: लोक गीत वस्तुत: वे गीत हैं, जिनका गायन व व्यवहार सामान्य व्यक्ति अपनी भावनाओं को प्रकट करने के लिए करता है। इसीलिए लोक-गीतों के विषय-वस्तु सामान्य लोगों के जीवन से संबंधित होते हैं। उनके सुख-दुख, रीति-रिवाज, मान्यताएं, परम्पराएं, जीवन दर्शन, दैनिक जीवन से संबंधित बातें, सामाजिक व पारिवारिक संबंध तथा उनके व्यवसाय कार्यप्रणाली आदि लोकगीतों के विषय होते हैं।

# लोकगीत के शास्त्रीय सन्दर्भ

अनादि काल से मानव अपनी हृदयगत भावनाओं को स्वर व लय के माध्यम से अभिव्यक्त करता रहा है। संगीत संबंधी प्राचीन व मध्यकालीन शास्त्रों को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि लोक संगीत व लोक गीतों को परिमार्जित व परिष्कृत नियमबद्ध अभिजात्य वर्ग के शास्त्रीय संगीत की तुलना में बराबर का महत्त्व दिया गया है, व इसे शास्त्रीय संगीत से हेय नहीं, अपितु उसके समकक्ष माना गया है। इन दोनों का ही विकास अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से हुआ।

आठवीं शताब्दी में आचार्य मतंग ने 'बृहद्देशी' नामक एक अति महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिखा जिसमें निम्न श्लोक में देशी संगीत की व्याख्या की है-

"अबला बाल गोपालैः क्षितिपालैः निजेच्छया।
गीयते सानुरागेण स्वदेशे देशिरुच्यते॥"

अर्थात- स्त्रियों, बालकों, गोपालों अर्थात श्रमिक वर्ग एवं राजाओं के द्वारा अपने-अपने देश (क्षेत्र) में रुचि पूर्वक और अनुराग सहित गाये जाने वाले गीत "देशी" कहलाते हैं। इस श्लोक के अर्थ के अनुसार लोक संगीत ही देशी संगीत है।

तेरहवीं शताब्दी में पं० शारंगदेव द्वारा रचित ग्रन्थ "संगीत रत्नाकर" संगीत जगत का माना हुआ ग्रंथ है। उसमें "देशी" संगीत की परिभाषा इस प्रकार दी गई है-

"देशे देशे जनानां यदुच्या हृदयरञ्जकम् ॥23॥
गीतं च वादनं नृत्तं तद्देशीत्यभिधीयते।"

अर्थात अलग-अलग देश (क्षेत्र) में अलग अलग लोगों की रुचि के अनुकूल हृदय को रंजित (आनंदित) करने वाले गीत, वादन तथा नृत्य को "देशी" कहते हैं। इस श्लोक में भी यह स्पष्ट है कि देशी संगीत अलग-अलग क्षेत्र में गाया-बजाया जाने वाला जन सामान्य का ही संगीत है। यही व्याख्या लोक संगीत की भी सर्व मान्य है।

आज भी हम लोकगीत उन्हें कहते हैं जिसे जन सामान्य अपनी रुचि के अनुसार सहज ढंग से, अपनी-अपनी क्षेत्रीय भाषा व बोली में, बिना किसी औपचारिक नियम-बंधन को मानते हुए, अपने मन को आह्लादित करने, अपने जीवन के विभिन्न आयामों की अभिव्यक्ति करने के लिए गाता है। विभिन्न क्षेत्रों के अपने-अपने लोक-धर्म के अनुसार लोकगीत भी अलग-अलग होते हैं, जो उस क्षेत्र विशेष की संस्कृति का प्रतिमान रूप होते हैं।

# अवधी लोकगीतों का सांस्कृतिक पक्ष :-

उत्तर प्रदेश का पूर्वी अंचल अवध क्षेत्र माना जाता है। प्रतापगढ़, सुल्तानपुर, प्रयागराज (इलाहाबाद), अयोध्या (फैज़ाबाद), बाराबंकी, लखनऊ, रायबरेली, गोंडा, बहराइच, जौनपुर, बांदा - इन जिलों में अवधी बोली का प्रयोग किया जाता है। अवधी बोली के भी कई अलग-अलग रूप हैं, परन्तु गीतों में एकरूपता दिखती है। अवधी बोली भोजपुरी के अत्यन्त सन्निकट है। भौगोलिक व सांस्कृतिक दृष्टि से दोनों में इतनी गहन निकटता है कि कभी-कभी दोनों में अन्तर करना कठिन हो जाता है। दोनों क्षेत्रों की परम्पराओं, रीति-रिवाज, पहनावा, भोजन, पर्व, त्योहार, मान्यताओं आदि में भी बहुत साम्य है।

भगवान श्री राम का जन्म अवध क्षेत्र में होने के कारण यहां भगवान श्री राम का अत्यधिक महत्त्व है। अवध के जन-मानस में भगवान श्री राम का आदर्श गहराई तक रचा-बसा हुआ है। यहां के लोकगीतों में भी राम की स्पष्ट छाप है। अधिकांश लोकगीतों में "रामा हो ---" अथवा "हो रामा ---" या केवल "रामा" की टेक लेने की

प्रथा प्रचलित है। लोकगीतों के सर्वाधिक प्रिय पात्र भी श्री राम व उनके जीवन से संबंधित अन्य चरित्र हैं। अवधी लोकगीतों के वर्ण्य विषयों में भी भगवान श्री राम के जीवन से संबंधित प्रसंग अन्य विषयों की अपेक्षा अधिक पाए जाते हैं।

भगवान श्री राम के बाद श्री कृष्ण विषयक लोकगीत, तदुपरान्त देवी, शंकर जी, गणेश भगवान से संबंधित लोकगीत अवध क्षेत्र में गाए जाते रहे हैं। अवधी लोकगीतों का फलक अत्यन्त व्यापक है। व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक शायद ही कोई ऐसा अवसर हो, जो अवधी लोकगीतों का विषय न हो। इस परियोजना के अंतर्गत हमने अधिक से अधिक विषयों से संबंधित लोकगीतों को ध्वन्यांकित व अभिलेखित करने का प्रयास किया है। डा० विद्या बिन्दु सिंह ने उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ द्वारा प्रकाशित उत्तर प्रदेश के लोकगीतों के संकलन "चन्दन चौक" (पृ० २१-३०) में लोकगीतों को विस्तार पूर्वक वर्गीकृत किया है, जिसे हम आगे उद्धृत कर रहे हैं। प्रस्तुत रिपोर्ट में इनमें से लगभग सभी प्रकार के लोकगीतों को समाहित किया गया है -

# अवधी लोकगीतों का वर्गीकरण

## संस्कार गीत :-

१- पुत्र जन्म के गीत - सोहर, उठान या उठौना, उलारा या उतारा, बधाई, छठी, बरहीं के गीत
२- मुण्डन के गीत - सोहर
३- यज्ञोपवीत (जनेऊ) के गीत - सोहर
४- विवाह के गीत - सहाना, गारी आदि
५- गौना (द्विरागमन) के गीत, विदाई के गीत
६- मृत्यु संस्कार के गीत - निर्गुण आदि

## ऋतु गीत :-

१- वर्षा ऋतु के गीत - कजरी, सावनी, झूला
२- बारहमासा - वर्ष के बारहों महीनों का वर्णन करने वाले गीत
३- चौमासा - वर्षाऋतु के चार महीनों का वर्णन करने वाले गीत
४- बसन्त ऋतु के गीत - फगुआ, फाग, चौताल, डेढ़ताल, चहका आदि
५- चैता या चैती - चैत्र मास में गाए जाने वाले गीत

## जाति गीत :-

१- अहीरों का गीत
२- धोबियों का गीत
३- कुम्हारों का गीत
४- कहारों का गीत

5- नाइयों का गीत
6- तेली, भड़भूंजों का गीत
7- मालियों का गीत
8- हरिजनों / दलितों का गीत
9- जोगियों का गीत, मांगने वालों का गीत
10- गड़रियों / चरवाहों का गीत

## धार्मिक गीत :-

1- व्रत, उपवास, पर्व, त्योहार, दान-स्नान आदि के गीत
2- विभिन्न देवी-देवताओं के गीत
3- पौराणिक आख्यान से संबंधित गीत
4- प्रकृति-पूजा के गीत
5- आध्यात्मिक तथा दार्शनिक भावना या जीवन-दर्शन से संबंधित गीत, निर्गुण आदि
6- तन्त्र-मन्त्र, जादू-टोना, आह्वाहन के गीत
7- शुभ संस्कारों पर मंगल हेतु प्रार्थना के गीत

## श्रम परिहार के गीत :-

1- चक्की पीसने (जंतसार) के गीत
2- निरवाही (सोहनी) के गीत
3- रोपनी के गीत
4- कोलहुई (कोलहू चलाने) के गीत
5- मल्लाहों (नाव खेने) के गीत
6- कटनी (फसल की कटाई) के समय गाए जाने वाले गीत
7- अन्य श्रम गीत

## खेल संबंधी गीत :-

1- लोरी तथा पालने के गीत
2- कठिन शब्दों के उच्चारण संबंधी गीत
3- बालकों के खेल गीत
4- बालिकाओं के खेल गीत
5- जल-क्रीड़ा के गीत

## प्रणय संबंधी (शृंगारिक) गीत :-

1- चकटा
2- पूर्वी
3- लाचारी
4- बिदेसिया
5- दादरा
6- झूमर

उपरोक्त के अतिरिक्त भी अनेक प्रकार के लोकगीत अवध क्षेत्र में प्रचलित हैं। जीवन के लगभग समस्त आयाम इन लोकगीतों में परिलक्षित होते हैं। जन-सामान्य के जीवन का कोई भी पक्ष इन लोकगीतों से अछूता नहीं रहा है। उल्लास का प्राकट्य, कठोरतम वेदना की टीस, सम्बन्धों की परस्पर तकरार, मीठी नोंक-झोंक, मनुहार, उलाहना, हठ पूर्ण मांग, आशा के स्वर, वियोग का असह्य दुख, आदि अनेक रंगों से इन लोकगीतों का चित्र सराबोर है। आगामी पृष्ठों में इन्हीं लोकगीतों की विराट पूंजी समाहित है।